अध्याय 7: महिलाएँ, जाति एवं सुधार

आज से 200 साल पहले बच्चों की शादी बहुत कम उम्र में कर दी जाती थी। हिंदू व मुसलमान, दोनों धर्मों के पुरुष एक से ज़्यादा पत्नियाँ रख सकते थे। विधवाओं को अपने पति के चिता के साथ ही जिंदा जला दिया जाता था। और उन्हें सती (सदाचारी महिला) कहकर महिमामंडित किया जाता था। संपत्ति पर अधिकार और शिक्षा तक उनकी कोई पहुँच नहीं थी।

➡ ज़्यादातर इलाकों में लोग जातियों में बँटे हुए थे। **ब्राह्मण** और **क्षत्रिय** खुद को ऊँची जाति का मानते थे। व्यापार और महाजनी **वैश्य** कहलाते थे। काश्तकार,बुनकर व कुम्हार जैसे दस्तकारों को **शूद्र** कहा जाता था।

➡ इस श्रेणीक्रम में सबसे नीचे ऐसी जातियाँ थी जो गाँवों-शहरों को साफ़-सुथरा रखती थीं या ऐसे काम धंधे करती थी जिन्हें ऊँची जातियों के लोग दूषित कार्य मानते थे। इनको **अछूत** माना जाता था।

- इन लोगों को मंदिरों में प्रवेश करने, सवर्ण जातियों के कुओं से पानी निकालने या ऊँची जातियों के आधिपत्य वाले घाट-तलाबों पर नहाने की छूट नहीं होती थी।

परिवर्तन की दिशा में उठते कदम

19वीं सदी की शुरुआत से ही सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और धार्मिक मुद्दों पर पुरुषों (और कभी-कभी महिलाओं) के बीच की चर्चाएँ किताबों, अख़बारों, पत्रिकाओं, पर्चों और पुस्तिकाओं द्वारा आम लोगों तक पहुँचने लगी थी।

- उनमें से बहुत सारे अपनी भाषाओं में लिखकर अपने विचार व्यक्त कर सकते थे। ये सामाजिक परिवर्तन के आंदोलनों से जुड़ी होती थीं।

➡ **राजा राममोहन रॉय (1772-1833) ने कलकत्ता में ब्रह्मो सभा एक सुधारवादी संगठन बनाया था (जिसे बाद में ब्रह्मो समाज के नाम से जाना गया)।** वे समाज में परिवर्तन लाना और अन्यायपूर्ण तौर-तरीकों से छुटकारा पाना चाहते थे। वह देश में पश्चिमी शिक्षा का प्रसार करने और महिलाओं के लिए ज़्यादा स्वतंत्रता व समानता के पक्षधर थे।

विधवाओं की ज़िंदगी में बदलाव लाने की कोशिश

राममोहन रॉय संस्कृत, फ़ारसी तथा अन्य कई भारतीय एवं यूरोपीय भाषाओं के अच्छे ज्ञाता थे। उन्होंने अपने लेखन के ज़रिए यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि प्राचीन ग्रंथो में विधवाओं को जलाने की अनुमति कहीं नहीं दी गई है। फलस्वरुप, **1829 में सती प्रथा पर पाबंदी लगा दी गई।**

➡ प्रसिद्ध सुधारक **ईश्वरचंद्र विद्यासागर** ने भी विधवा विवाह के पक्ष में प्राचीन ग्रंथो का ही हवाला दिया था। अंग्रेज सरकार ने उनका सुझाव मानकर **1856 में विधवा विवाह के पक्ष में एक कानून पारित कर दिया।** विधवाओं के विवाह का विरोध करने वालों ने विद्यासागर का विरोध कर उनका बहिष्कार कर दिया।

- **मद्रास प्रेज़ीडेंसी के तेलुगू भाषी इलाकों में वीरेशलिंगम पंतुलु ने विधवा विवाह के समर्थन में एक संगठन बनाया था।**
- **लगभग उसी समय बम्बई में युवा बुद्धिजीवियों और सुधारकों ने भी विधवा विवाह के प्रचार-प्रसार का संकल्प लिया।**

- **उत्तर में आर्य समाज की स्थापना (1875) करने वाले स्वामी दयानंद सरस्वती ने भी विधवा विवाह का समर्थन किया।**

इसके बावजूद विवाह करने वाली विधवा महिलाओं की संख्या काफ़ी कम थी। और उन्हें समाज में स्वीकार नहीं किया जाता था। रूढ़िवादी तबके के लोग कानून का विरोध करते रहे।

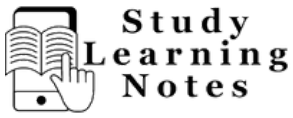

लड़कियाँ स्कूल जाने लगती हैं

19वीं सदी के मध्य में कलकत्ता में विद्यासागर और मुंबई में बहुत सारे अन्य सुधारकों ने लड़कियों के लिए स्कूल खोले। इस तरह के स्कूलों से लोगों को भय था कि लड़कियाँ घरेलू कामकाज छोड़कर बाहर निकलने से बिगड़ जाएँगी।

- ज़्यादातर महिलाओं को उनके उदार विचारों वाले पिता या पति की देखरेख में घर पर ही पढ़ाया जाता रहा।
- कई महिलाओं ने अपने आप ही पढ़ना-लिखना सीख लिया जैसे: **राशसुंदरी देबी।**
- **19वीं सदी के आख़िरी हिस्से में आर्य समाज द्वारा पंजाब में और ज्योतिराव फुले द्वारा महाराष्ट्र में लड़कियों के लिए स्कूल खोले गए।**
- उत्तर भारत के कुलीन मुस्लिम परिवारों की महिलाओं को अरबी में क़ुरान-शरीफ़ पढ़ाने के लिए घर पर ही शिक्षिकाएँ रखी जाती थी।
- **मुमताज़ अली जैसे कुछ सुधारकों ने क़ुरान-शरीफ़ की आयतों का हवाला देकर कहा कि महिलाओं को भी शिक्षा का अधिकार मिलना चाहिए।**
- 19वीं सदी के आख़िर में ही उर्दू के उपन्यासों में महिलाओं को धर्म और घरेलू साज-सँभाल के बारे में पढ़ने के लिए प्रेरित किया जाता था।

महिलाओं के बारे में महिलाएँ लिखने लगीं

भोपाल की बेगमों ने अलीगढ़ में लड़कियों के लिए प्राथमिक स्कूल खोला। बेगम रुकैया सख़ावत हुसैन ने कोलकाता और पटना में मुस्लिम लड़कियों के लिए स्कूल खोले।

https://studylearningnotes.com

वह रूढ़िवादी विचारों की कटु आलोचक थीं और उनका मानना था यह प्रत्येक धर्म के धार्मिक नेताओं ने औरतों को निचले दर्ज़े में रखा है।

- 1880 के दशक तक भारतीय महिलाएँ विश्वविद्यालय में प्रवेश लेकर कुछ चिकित्सक और कुछ शिक्षिका बन गईं।
- बहुत सारी महिलाएँ लिखकर समाज में महिलाओं की स्थिति पर अपने आलोचनात्मक विचार प्रकाशित किए।

➡ पूना में घर पर ही रहकर शिक्षा प्राप्त करने वाली **ताराबाई शिंदे ने स्त्रीपुरुषतुलना में पुरुषों और महिलाओं के बीच मौजूद सामाजिक फ़र्कों की आलोचना की है।**

➡ **संस्कृत की महान विद्वान पंडिता रमाबाई का मानना था कि हिंदू धर्म महिलाओं का दमन करता है।** उन्होंने पूना में एक विधवागृह की स्थापना की। वहाँ इनको अपनी रोज़ी-रोटी खुद चलाने के लिए हुनर सिखाया जाता था।

- **यह सब देखकर हिंदू राष्ट्रवादियों को लगने लगा था कि हिंदू महिलाएँ पश्चिमी तौर-तरीके अपना रही है** जिससे हिंदू संस्कृति और पारिवारिक संस्कार नष्ट हो जाएँगे। रूढ़िवादी मुसलमान भी इन बदलावों से चिंतित थे।
- 20वीं सदी की शुरुआत से ही महिलाएँ सुधारक महिलाओं को मताधिकार, बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएँ और शिक्षा के अधिकार के बारे में कानून बनवाने के लिए राजनीतिक दबाव समूह बनाने लगी थीं। इनमें से कुछ ने राष्ट्रवादी और समाजवादी आंदोलनों में भी हिस्सा लिया।

20वीं सदी में जवाहरलाल नेहरू और सुभाषचंद्र बोस जैसे नेताओं ने महिलाओं के लिए और अधिक स्वतंत्रता व समानता की माँगों का समर्थन किया। और स्वतंत्रता के लिए महिलाओं को अंग्रेज़ी राज विरोधी संघर्ष में सहयोग देने के लिए आह्वान किया।

Study Learning Notes

जाति और समाज सुधार

राममोहन रॉय ने जाति व्यवस्था की आलोचना करने वाले एक पुराने बौद्ध ग्रंथ का अनुवाद किया। प्रार्थना समाज भक्ति परंपरा का समर्थन था जिसमें सभी जातियों की आध्यात्मिक समानता पर ज़ोर दिया गया था।

- **जाति उन्मूलन के लिए बम्बई में 1840 में परमहंस मंडली का गठन किया गया।**
- इन सुधारकों और सुधार संगठनों के सदस्यों में से बहुत सारे ऊँची जातियों के लोग थे।
- 19वीं सदी में ईसाई प्रचारक आदिवासी समुदायों और निचली जातियों के बच्चों के लिए स्कूल खोलने लगे थे।

➡ **जब शहरों में कारखानों और नगरपालिकाओं में नौकरियाँ निकलने लगी। तब गाँव और छोटे कस्बों के गरीब लोग शहरों की तरफ़ जाने लगे। इनमें बहुत सारे निम्न जातियों के लोग थे।**

- कुछ लोग असम, मॉरिशस, त्रिनीदाद और इंडोनेशिया आदि स्थानों पर बाग़ानों में काम करने चले गए। यहाँ का काम बहुत कठोर था।
- परंतु गरीबों, निचली जातियों के लोगों को गाँव के ज़मींदारों द्वारा दमनकारी कब्ज़े और दैनिक अपमान से छुटने का मौका था।

इसके अलावा सेना में भी लोगों की ज़रूरत बढ़ गई थी। **महार समुदाय (अछूत) के बहुत सारे लोगों को महार रेज़ीमेंट में नौकरी मिल गई।** दलित आंदोलन के नेता बी.आर.अंबेडकर के पिता एक सैनिक स्कूल में ही पढ़ाते थे।

समानता और न्याय की माँग

➡ **मध्य भारत में सतनामी आंदोलन की शुरुआत घासीदास ने की,** जिन्होंने चमड़े का काम करने वालों को संगठित किया और उनकी सामाजिक स्थिति में सुधार के लिए आंदोलन छेड़ दिया।

➡ **पूर्वी बंगाल में हरिदास ठाकुर के मतुआ पंत ने चांडाल काश्तकारों के बीच काम किया।** हरिदास ने जाति व्यवस्था को सही ठहराने वाले ब्राह्मणवादी ग्रंथो पर सवाल उठाया।

➡ **केरल में ऐझावा जाति के श्री नारायण गुरु ने अपने लोगों के बीच एकता का आदर्श रखा।** उन्होंने जातिगत भिन्नता के आधार पर लोगों के बीच भेदभाव करने का विरोध किया। उनके अनुसार सारी मानवता की एक ही जाति है। उनका एक महत्वपूर्ण कथन था —**"ओरु जाति, ओरु मतम, ओरु दैवम मनुष्यानु" (मानवता की एक जाति, एक धर्म, एक ईश्वर)।**

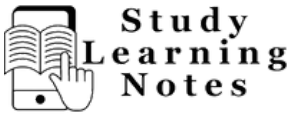

ग़ुलामगीरी

1827 में जन्मे ज्योतिराव फुले ने ईसाई प्रचारकों द्वारा खोले गए स्कूलों में शिक्षा पाई थी। बड़े होने पर उन्होंने जाति आधारित समाज में फैले अन्याय के विरुद्ध विरोध किया।

- फुले के अनुसार, ऊँची जातियों का उनकी ज़मीन और सत्ता पर कोई अधिकार नहीं है—यह धरती यहाँ के (निम्न जाति) देशी लोगों की है।
- **फुले द्वारा स्थापित सत्यशोधक समाज नामक संगठन ने जातीय समानता के समर्थन में मुहिम चलाई।**

➡ **1873 में फुले ने ग़ुलामगिरी नामक किताब, उन सभी अमरीकियों को समर्पित की जिन्होंने ग़ुलामों को मुक्ति दिलाने के लिए संघर्ष किया था।** इस तरह उन्होंने भारत की निम्न जातियों और अमेरिका के काले ग़ुलामों की दुर्दशा को एक-दूसरे से जोड़ दिया।

जाति सुधार का आंदोलन 20वीं सदी में पश्चिम भारत में बी.आर. अंबेडकर और दक्षिण में ई.वी. रामास्वामी नायकर जैसे महान दलित नेताओं के नेतृत्व में चलता रहा।

मंदिरों में कौन जा सकता था?

अम्बेडकर एक महार परिवार में पैदा हुए थे। बचपन में उन्होंने जातीय भेदभाव को बहुत नज़दीक से देखा था। स्कूली शिक्षा के बाद उच्च अध्ययन के लिए अमरीका चले गए। 1919 में भारत लौटने पर उन्होंने समकालीन समाज में उच्च जातीय सत्ता संरचना पर काफ़ी लिखा।

studylearningnotes.com

➡ 1927 में अंबेडकर के मंदिर प्रवेश आंदोलन में महार जाति के लोगों ने बड़ी संख्या में हिस्सा लिया। **1927 से 1935 के बीच अंबेडकर ने मंदिरों में प्रवेश के लिए ऐसे तीन आंदोलन चलाए।** वह पूरे देश को दिखाना चाहते थे कि समाज में जातीय पूर्वाग्रहों की जकड़ कितनी मज़बूत है।

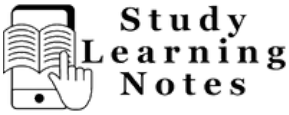

गैर-ब्राह्मण आंदोलन

20वीं सदी के आरंभ में गैर-ब्राह्मण आंदोलन उन गैर-ब्राह्मण जातियों ने शुरू किया जिन्हें शिक्षा, धन और प्रभाव हासिल हो चुका था। उनका तर्क था कि ब्राह्मण उत्तर से आए आर्य आक्रमणकारियों के वंशज हैं जिन्होंने यहाँ के मूल निवासियों (देशी द्रविड़ नस्लों) को हराकर दक्षिणी भूभाग पर विजय हासिल की थी।

➡ पेरियार के नाम से प्रसिद्ध ई.वी. रामास्वामी नायकर एक मध्यवर्गीय परिवार में पले-बढ़े थे। अपने प्रारंभिक जीवन में संन्यासी थे और उन्होंने संस्कृत शास्त्रों का गंभीरता से अध्ययन किया था।

- बाद में कांग्रेस के सदस्य बने। परंतु जब वह राष्ट्रवादियों द्वारा आयोजित की गई दावत में गए, वहाँ जातियों के हिसाब से बैठने का अलग-अलग इंतजाम देखकर उन्होंने हताश होकर पार्टी छोड़ दी।
- इसलिए **उन्होंने स्वाभिमान आंदोलन शुरू किया।** उनका कहना था कि मूल तमिल और द्रविड़ संस्कृति के असली वाहक अछूत ही है जिन्हें ब्राह्मणों ने अपने अधीन कर लिया है।
- **पेरियार हिंदू वेद पुराणों के कट्टर आलोचक थे। ख़ासतौर से मनु द्वारा रचित संहिता, भागवतगीता और रामायण के वे कटु आलोचक थे।**
- उनका कहना था कि ब्राह्मणों ने निचली जातियों पर अपनी सत्ता तथा महिलाओं पर पुरुषों का प्रभुत्व स्थापित करने के लिए इन पुस्तकों का सहारा लिया है।

रूढ़िवादी हिंदू समाज ने उत्तर में सनातन धर्म सभाओं तथा भारत धर्म महामंडल और बंगाल में ब्राह्मण सभा जैसे संगठनों के ज़रिए निम्न जातीय नेताओं के भाषणों, विचारपूर्ण लेखन और आंदोलनों का सख़्ती से विरोध किया। इन संगठनों का मकसद हिंदू धर्म में जातीय ऊँच-नीच का महत्व बनाए रखना था।